सम्पादकीय वक्तव्य

●●●●●

षट्खंडागमके प्रथम खंड जीवस्थानके आठ अनुयोगद्वार हैं। उनमेंसे पांच अनुयोगद्वारोंका द्वितीय संशोधित संस्करण संपादित होकर जैन संस्कृति संरक्षक संघ. (जीवराज जैन ग्रंथमाला) सोलापुरत द्वारा प्रथम चार भाग (पुस्तक) तक मुद्रित हो चुके हैं।

यह पांचवां भाग है। इसमें अन्तके तीन अनुयोग अन्तर-भाव-अल्पबहुत्व संमिलित हैं। इस पुस्तकके संशोधन-सम्पादन के समय हमारे सामने ताडपत्रीय दो प्रतियोंके पाठभेद उपलब्ध हैं। इनमेंसे जिसे प्रथम प्रतिके रूपमें स्वीकार किया गया है उसके पाठभेद श्रीमान् पं. बालचंद्रजी सिद्धान्त शास्त्रीने लिखे हैं। तथा दूसरी प्रतिके पाठभेद कन्नड शास्त्री स्व. चंद्रराज शास्त्रीने लिखे हैं। तदनुसार इस पुस्तकके संशोधन-सम्पादनमें जो पाठभेद स्वीकार किये गये हैं उनमेंसे कतिपय मुख्य संशोधित पाठभेदोंको प्रथम आवृत्तिमें मुद्रित पाठभेदोंके साथ यहां दिखलाया जा रहा है।

उनमेंसे ताडपत्रीय प्रतिके पाठभेद मुद्रित प्रतिके पृष्ठ ३३६ तकके ही थे। किन्तु ताडपत्रीय प्रति २ के पाठभेद अन्ततक के थे। इनके अतिरिक्त एक तीसरी ताडपत्रीय प्रति के पाठभेद भी मुद्रित प्रतिके पृष्ठ १०४ तक हमारे सामने रहे हैं। अतःइस प्रतिके जितने पाठभेद हमें उपलब्ध हो सके उन सबका उपयोग हमने किया है।

इतना अवश्य है कि प्रस्तावनामें कतिपय साधारण पाठभेदोंको नहीं दिखाया गया है। इनके अतिरिक्त इन ताडपत्रीय प्रतियोंमें बहुलतासे कतिपय ऐसे पाठभेद भी पाये गये हैं जिन्हें मुद्रित प्रतिमें पाये जानेवाले पाठोंके साथ लगभग मिलते हुए कहा जा सकता है। संक्षेपमें उनका भी दिग्दर्शन यहां किया गया है।

इसके अतिरिक्त जो पाठभेद लिपिकारोंकी असावधानीके कारण अशुद्धरूपमें लिपिबद्ध हो गये हैं उन्हें अनुपयोगी-अनावश्यक समझकर यहां नहीं दिखाया है।

आभार प्रदर्शन करते हुए हमें इस बात की प्रसन्नता है कि जैन संस्कृति संरक्षक संघ (जीवराज जैन ग्रंथमाला) सोलापुर के कार्यालय के व्यवस्थापक एक तत्त्वज्ञ और कार्यदक्ष श्री. पं. नरेन्द्रकुमार भिसीकर शास्त्री (न्यायतीर्थ-महामहिमोपाध्याय) इनके द्वारा इस ग्रंथके संशोधन-सम्पादनमें सब प्रकारकी अनुकूलता तथा सहयोग मिलता रहता है। यही कारण है कि हम शनैः शनै मुद्रित प्रतियोंके संशोधन जैसे दुरूह कार्यको सम्पादित कर रहे हैं।

यद्यपि वर्तमानमें इस संस्थाके भूतपूर्व मंत्री स्व. श्रीमान् बालचन्द देवचन्दजी शाह (काका) हमारे बीच नहीं रहे हैं। फिर भी उन्हींके परिवारके एक सम्मान्य सदस्य श्रीमान् सेठ रतनचन्दजी सखाराम शाह उनके कार्यको योग्यतापूर्वक निर्वाह कर रहे हैं।

पहले यह कहा जाता था कि छठवीं पुस्तक तकका ही संशोधन कार्य चलाना है। किन्तु अबतक किये गये कार्य को देखकर अब यह कहा जा रहा है कि इस कार्यको बीचमें न छोडकर अन्ततक

आगेके सभी सोलह भागोंका संशोधन कराना है।

हम जानते हैं कि यह कार्य ताडपत्रीय प्रतियोंके आधारसे पाठकोंको तथा अभ्यासुओंको मूल विषयतक पहुंचनेमें बडी सहायता मिलती आई है, मिल रही है, और मिलती रहेगी। यह बात अबतक जितना कुछ भाग संशोधित और सम्पादित होकर प्रकाशित हुआ है उसीसे समझमें आ जाती है।

अतः मेरी नम्र रायमें इस ग्रंथमालाने जो यह कार्य हाथमें लिया है उसका अन्ततक निर्वाह होना चाहिये। इसीमें उसकी सुकरता है। इसलिये हम इस संस्थाके प्रति अपनी नम्र श्रद्धा व्यक्त करते हुए उक्त दोनों महानुभावोंके भी आभारी हैं।

विज्ञेषु किमधिकम्।

– स्व. पं. फूलचन्द्रजी सिद्धान्तशास्त्री